International Journal of Applied Research 2015; 1(10): 918-919

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(10): 918-919
www.allresearchjournal.com
Received: 02-07-2015
Accepted: 05-08-2015

डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय ढलियारा
कांगडा हिप्र

Correspondence
डॉ. शिवदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय ढलियारा
कांगडा हिप्र

मनोवैज्ञानिक उपन्यास परम्परा– एक मूल्यांकन

डॉ. शिवदत्त शर्मा

हिन्दी साहित्य विविध उपन्यासों से अटा पटा है। यद्यपि उपन्यास विधा पर्याप्त विलम्ब से हिन्दी में आई फिर भी जिस तीव्रता से सम्पूर्ण साहित्य का कण्ठाहार बनी यह अत्यन्त श्लाघ्य है। वास्तव में प्रेमचन्द से पूर्व ही उपन्यास पाठकों में अभिरुचि उत्पन्न करने में सफल हो गया था फिर भी प्रेमचन्द के बाद उपन्यास जितना लोकप्रिय हुआ शायद ही उतनी कोई विधा लोक प्रिय हुई हो। प्रेमचन्द ने न केवल उपन्यास को लोकप्रिय बनाया अपितु हर तरह के उपन्यासों के लिए एक आदर्श भी प्रस्तुत किया।

प्रेमचन्द युग के बाद मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों का युग आरंम्भ होता है। प्रेमचन्द युग के उपरान्त लेखकों और पाठकों के सपक्ष नई समस्याएं एवं नए विषय थे जो प्रेंमचन्द युग से नितान्त भिन्न थे। स्वाभविक ही है नए नए उपन्यास और विषय उभर कर सामने आए। मनोविज्ञान का चित्रण उनमें मुख्य रूप से उभर कर सामने आया। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में उपन्यासकार बाह्य संघर्ष को त्याग कर अन्तः संघर्ष का चित्रण करता है। स्पष्ट है मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के पात्र बहिर्मुखी न हो कर अन्तर्मुखी होते हैं।वे पुरातन तथा नैतिक मूल्यों को त्याग कर नए उपमूल्यों के अभाव के कारण व्यक्ति स्वातन्त्रय की घोषणा करते हैं। प्रेमचन्द युगीन उपन्यासकारों ने व्यक्ति और समाज के संघर्ष का चित्रण किया था और समाज के अन्तर्गत विविध वर्गों के समक्ष पारस्परिक संघर्ष का निरूपण किया था। प्रेमचन्द युगीन उपन्यासों में व्यक्ति तथा व्यक्तियों के आपसी संघर्षों की कहानी प्रस्तुत की जाती रही परन्तु डार्विन कार्लमार्क्स फ्राइड आदि उपन्यासकारों ने नवीन चेतना का संचार किया। वैज्ञानिक आविष्कारों तथा औद्योगिक विकास के कारण नैतिक तथा सामाजिक मूल्यों का ह्रास होने लगा।परिणाम स्वरूप समाज में विघटन हुआ और परिवारों में भी विखराव आने लगां। इसका एक अन्य परिणाम यह हुआ कि बहिर्मुखता घटने लगी और अन्तर्मुखता बढने लगी। डॉ द्वारिका प्रसाद सक्सेना ने ठीक ही कहा हैकि– अब उपन्यासकार ने यह अनुभव किया कि बाहर के स्थूल संघर्ष से जूझने की अपेक्षा व्यक्ति के मानस में उठने वाले अन्तः संघर्ष से जूझना आवश्यक है क्योंकि अन्तः संघर्ष का ही प्रभाव बाह्य संघर्ष पर पडता है। इस प्रकार अब उपन्यासों में बाह्य संघर्ष का स्थान अन्तः संघर्ष ने ले लिया और उपन्यासकार अनुभूति के विविध स्तरों पर व्यक्ति के मानस में चलने वाले संघर्ष के अचेतन कारणों की खोज में मनोविज्ञान की ओर प्रवृत्त हुआ।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के लेखन के साथ ही हिन्दी उपन्यास साहित्य के चरित्र–चित्रण सम्बन्धी धारणाओं में बहुत बडा परिवर्तन हुआ। एक सुसम्बद्ध व्यक्तित्व के विकास पर विशेष बल दिया गया। इस बात पर बल दिया गया कि मानव क्षणों में जीता है। एक ही क्षण आकाश को छूने लगता है तो दूसरी ओर क्षण में ही पाताल लोक में पहुंच जाता है।एक क्षण में मानव अच्छा और अगले क्षण बुरा बन जाता है। इस तरह मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार मानव की आन्तरिक जीवन सत्ता तथा उसकी विविधता तथा जटिलता का उद्घाटन नहीं करता है। यही कारण है कि जीवनी प्रधान उपन्यास लिखे जाने लगे ।उपन्यासकार जीवन के एक एक क्षण और मनः स्थिति का उद्घाटन करता है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के रचना विधान में उपन्यासकार स्वयं सामने नहीं आता लेकिन फिर भी वह मन की भीतरी परतों को उघाडने लगता है।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का सूत्रपात जैनेन्द्रकुमार से माना जाता है। परख सुनीता [1] त्यागपत्र कल्याणी सुखदा विवर्त व्यतीत जयवर्धन मुक्ति बोध अनन्तर तथा अनाम स्वामी आदि उनके 11 उपन्यास हैं। जैनेन्द्रके उपन्यासों में कहानी निमित्त मात्र होती है। बे व्यक्ति का मन टटोलते हैं। इस लिए उनके उपन्यासों में घटनाओं की बहुतायत नहीं है [2]। न ही उनमें आकस्मिकता है न कौतूहल की तीव्र स्थिति है बल्कि उपन्यासों की कहानी बिना उतार चढाव के आगे बढती है। पाठक एक तरह से ऐसा अनुभव करता है कि वह उपन्यास नही पढ रहा अपितु लेखक के अभिप्रेत जीवन की सहज यात्रा कर रहा है। [3] डॉ राम दरश मिश्र के अनुसार जैनेन्द्र का व्यक्ति बहुत कुछ सामाजिक यथार्थ से निरपेक्ष एक विशिष्ट दायरे में घूमता हुआ दिखाई पडता है। कथा की दुनिया व्यक्ति–मन के भीतर अधिक चलती है बाहिर कम। इसी लिए घटना की स्थूलता बहुलता और

विविधता के स्थान पर उसकी सूक्ष्मता और स्वल्पता गृहीत होती है। सारा संघर्ष भीतरी होता है। जैनेन्द्र में वातावरण का अभाव दिखाई देता है तथा वे संकेतों से काम लेते हैं सूक्तियों का उल्लेख उनके उपन्यासों में नहीं है बल्कि वे व्यंजना से काम चलाते हैं।उपदेश नही देते संवाद छोटे छोटे पाए जाते है। डॉ रामदरश का कथन पूर्णतः जैनेन्द्र की उपन्यास कला का समग्र उद्घाटन कर देता है।

इला चन्द्र जोशी के उपन्यास कथा विकास की दृष्टि से सामाजिक उपन्यास कहे जा सकते हैं क्योंकि उनमें कथा की मांसलता घटनाओं की संकुलता विविध कथा मोड आरोह –अवरोह आदि उसी प्रकार विद्यमान हैं जिस प्रकार सामाजिक उपन्यासों में होते हैं फिर भी उन्हें मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार कहा जा सकता है। वास्तव में जोशी जी मनोवैज्ञानिकता के पोषक होकर भी समाजवाद में विश्वास करते हैं। वे एक ओर तो व्यक्ति के मनः सत्य का उद्घाटन करते हैं तो दूसरी ओर अभिजात्य वर्ग पर चोट भी करते हैं। जोशी जी का मनोविज्ञान प्रायः अभिधारणा मूलक है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में सामाजिक समस्याएं केन्द्र बिन्दु नहीं होतीं बल्कि व्यक्ति के भीतर प्रविष्ट हो कर कुछ टटोलने का प्रयास इनमें रहता है। व्यक्ति के अन्तर्मन की गहराई में अवस्थित अन्तर्निहित वासनाओं ग्रंथियों तथा जटिल सत्यों का उदघाटन मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार करते हैं। एतदर्थ मनोविश्लेषण के सिद्धान्तों का सहारा लिया जाता है।जोशी जी व्यक्ति के मन की कथा न कह कर व्यक्ति को न पहचान कर उसकी ग्रंथियों और कुंठाओं का सहारा लेते हैं तथा मनोविज्ञान की कसौटी पर परखते हैं। उनके चर्चित उपन्यास संन्यासी [4] पर्दे की रानी [5] प्रेत और छाया निर्वासित जहाज का पंछी [6] आदि में मनोवैज्ञानिक विचार धारा को देखा जा सकता है। जोशी फ्राइड एडलर आदि से बहुत प्रभावित रहे हैं। सबसे अधिक वे युग से प्रभावित से हैं क्योंकि वे उनके सामूहिक अचेतन वाद से सहमत हैं। रामदरश मिश्र उनपर मार्क्सवाद का भी प्रभाव मानते हैं।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की परम्परा में जैनेन्द्र के उपरान्त सच्चिदानन्दवात्स्यायन अज्ञेय ही सही अर्थों में मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार कहे जा सकते हैं। उन्होंने हिन्दी मनोवैज्ञानिक उपन्यासों को प्रौढता प्रदान की। शेखर–एक जीवनी [7] नदी के द्वीप [8] तथा अपने अपने अजनवी [9] ये तीनों ही उपन्यास मनावैज्ञानिक उपन्यास हैं। मनोवैज्ञानिक सत्य को उद्घाटित करने में ये सिद्धहस्त हैं तथा इसके लिए इन्होंने विशेष पात्रों का सृजन नहीं किया। उन्होंने जीवन की अनुभूतियों को जीवन से ग्रहण किया है मनोविज्ञान के ग्रन्थों से नहीं। इन अनुभूतियों में अत्यधिक सच्चाई है तीव्रता है गहनता है। डॉ रामदरश अज्ञेय के बारे में लिखते हैं–अनुभूति के विविध आयामों को अनुभूतियों के जटिल संश्लिष्ट सम्बन्धों को बारीक से बारीक बोधों को या बोध के बारीक से बारीक स्तरों को इन उपन्यासों में कलात्मक माध्यम से उद्घाटित किया गया है। इसका कारण शायद यही है कि अज्ञेय के सारे उपन्यास स्वयं लेखक के व्यतित्व के भीतर से फूटे हैं।अपने अपने अजनवी को छोड कर उपन्यासकार अपने उपन्यासों में स्वयं ही नायक के रूप में दिखाई देता है।अज्ञेय ने स्वयं ही जीवन की अनुभूतियों की दृष्टि से बडा ही समृद्ध जीवन यापन किया हैं। उन्होंने जीवन को जी कर सत्य का साक्षात्कार किया है। उनके उपन्यासों में जीवन की सही अनुभूति और संवेदना उभरी है।इनके सभी पात्र असामान्य हैं। उन्होंने मनोविज्ञान के सिद्धान्तों को सिद्धान्त बना कर प्रस्तुत नहीं किया अपितु इसके परिप्रेक्ष्य में जीवन जीते हुए मनुष्य की अनुभूतियों बोधों मनःस्थितियों चेतन अवचेतन स्थित सत्यों और उनके द्वन्द्वों तथा उनसे परिचालित प्रभावित होते हुए आचारों– विचारों को ही गहराई और सूक्ष्मता से विवृत किया है। शेखर एक जीवनी उपन्यास जीवनी के रूपमें लिखा गया अज्ञेय का मनावैज्ञानिक उपन्यास माना जाता है। शिल्प और वस्तुघटन की दृष्टि से यह अलग प्रकार का उपन्यास है। इस उपन्यास में दैनिक जीवन में सामान्य सी दिखाई देने वाली बातों का अंकन बडे ही सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। शेखर साधारण व्यक्ति है परन्तु वह मानवता के संचित अनुभव के प्रकाश में ईमानदारी से अपने को पहचानने की कोशिश कर रहा है। हम सब के भीतर कहीं एक ऐसा शेखर है–जो बडा अच्छा नहीं है। उपन्यास में मनोविश्लेषण करते हुए व्यक्तिके मन के सूक्ष्मसे सूक्ष्म अनुभवों अन्तर्द्वन्द्वों बाहरी जगत के प्रति प्रतिक्रियाओं अवचेतन में स्थित उलझी हुई संवेदना तथा मन में उभरती हुई जिज्ञासाओं तथा प्रश्नों का मार्मिक अंकन किया गया है।यह उपन्यास न तो मनोविज्ञान का सूखा विश्लेषण है न ही आदर्शवादी कला का रंगीन उदात्त तथा स्थूल चरित्र सृजन है।

यौनसम्बन्धों को केन्द्र बनाकर नदी के द्वीप उपन्यास में अज्ञेय ने जीवन की सीमाओं में रहते मनोविश्लेषण किया है। घटनाओं का जमघट इसमें नहीं है तथा पात्रों की मनः स्थिति का सुन्दर चित्रण किया है। पात्र अन्तर्मुखी हैं तथा भीतर ही भीतर जीते दिखाई देते हैं। चारों ही पात्रों का मनोविज्ञानकी दृष्टि से कुशल चित्रण किया गया है।

अपने अपनेअजनवी अज्ञेय का अन्तिम तथा लघु उपन्यास है।1961 में छपे इस उपन्यास में मनोविज्ञान तथा अस्तित्ववाद दोनों का सुन्दर समन्वय हुआ है। [10] कथानक सूक्ष्म है इस उपन्यास में एक विशेष परिस्थिति में पडे दो पात्रों की मानसिकता का निरुपण किया है। उपन्यासकार ने दोनों पात्रों योके और सेल्मा के दैनिक जीवन के व्यापारों आपसी सम्बन्धों तथा ठहरे हुए समय में जीते तथा उनकी क्रियाओं का सजीव चित्रण किया है।ार उपन्यासकार योके तथा सेल्मा दोनों के अन्तर्द्वन्द्व तथा मनः स्थितियों का मनोविश्लेषण करता है। सेल्मा एक आस्थावान नारी है। कैंसर रोग से ग्रस्त होते हुए भी वह अस्तित्ववादी जीवन दर्शन में विश्वास रखती है परन्तु योके नास्तिक और अनीश्वर वादी नारी है। वह परमात्मा में विश्वासनहीं रखती।डॉरामदरश मिश्र के अनुसार उपन्यास में पात्रों की मनः स्थिति के भीतर से अस्तित्ववादी चिन्तन को स्वर दिया गया है।

उपन्यासकार अज्ञेय फ्राइड एडलर युग मार्क्स सात्र इलियट आदि अनेक चिन्तकों से प्रभावित थे। अपने अपने अजनवी से एक किरण प्रकाश की निकलती दिखाई देती है–क्षण को सत्य मानकर उसे भरपूर जीना। बीते क्षणों से वर्तमानके क्षणों का सम्बन्ध न मान कर उन्हें उनकी समग्रता में मान लेना अर्थात जो स्थिति सामने आ गई है उसे जीना और जीकर व्यतीत करना। सेल्मा इस सत्य को पा चुकी हैऔर मृत्यु को समीप पाकर भी उद्वेग हीन है परन्तु योके नहीं पा सकी लेखक ने अस्तित्ववादी चिन्तन और जीवन दर्शन को बडी सफाई से उभारा है।

इस तरह कहा जा सकता है कि अज्ञेय के उपन्यासों में विविध प्रत्ययों की अभिव्यक्ति कथा संरचना की कसावट वैचारिक धरातल पर अस्तित्ववादी चिन्तन पात्रोंकी वैचारिक प्रतीकात्मकता संवादों द्वारा भावाभिव्यक्ति भाषा की सजीव प्रयोग धर्मिता आदि विभिन्न प्रवृत्तियां विद्यमान हैं। अतः अज्ञेय हिन्दी साहित्यमें एक श्रेष्ठ एवं सफल मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार होने के कारण अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

संदर्भ सूचि

1. सुनीता जैनेन्द्र कुमार पृ 77
2. परख उपरोक्त पृ 86
3. त्यागपत्र उपरोक्त पृ 102
4. सन्यासी इलाचन्द्र जोशी पृ 68
5. पर्दे की रानी उपरोक्त पृ 74
6. जहाज का पंछी उपरोक्त पृ 97
7. शेखर– एक जीवनी अज्ञेय पृ 102
8. नदी के द्वीप उपरोक्त पृ 65
9. अपने अपने अजनवी उपरोक्त पृ114
10. अपने अपने अजनवी उपरोक्त पृ 77